IJAER/March-April-2019/Volume-8/Issue-2 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

जनपद सहारनपुर में ग्रामीण औद्यौगिकरण एवं औद्योगिक विकास का भौगोलिक मूल्यांकन

Rajni Saini,
Research Scholar, Dept of Geography,
North East Frontier Technical University

Dr. Chandrabhan Singh,
Research Supervisor, Dept of Geography,
North East Frontier Technical University

सार–

राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में राष्ट्रीय आय का सर्वाधिक अंश कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है एवं भारत की अधिकतर जनसंख्या भी कृषि एंव कृष्योत्तर कार्यो में संलग्न है। कृषि राष्ट्रीय अर्थतन्त्र की मेरूदण्ड की भूमिका का निर्वहन करती है। जनसंख्या की सक्रियता एवं कृषि उत्पादकता को ग्रामीण विकास तथा इससे सम्बद्ध कार्यक्रमों की सफलता हेतु अनिवार्य तत्व माना गया है। ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक, आर्थिक विकास को तीव्र गति प्रदान करने के उद्देश्य से विविध योजना एवं कार्यक्रमों को प्रसारित किया गया परन्तु इन कार्यक्रमों को अभिष्ठ सफलता प्राप्त न हो सकी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त अविकसित क्षेत्र में त्वरित विकास ग्रामीण जनसंख्या को गरीबी से उभारने एवं आर्थिक विषमताओं को दूर करने के लिए गरीबी उन्मूलन को योजनाबद्ध स्वरूप में अपनाया गया तथा पर्याप्त मात्रा में पूंजी विनियोजन का प्रावधान किया गया।

प्रस्तावना–

सहारनपुर जनपद को एक कृषि प्रधान प्रादेशिक क्षेत्र मानते हुए इसकी संरचना एवं इसमें चलने वाली विकास प्रक्रियाओं और उनके प्रारूप को अध्ययन के लिए चुना गया है। तहसील की केन्द्रीय स्थिति को देखते हुए तथा तहसील में कृषि और उसमे सम्बन्धित उद्योगो के लगने से एवं राजनैतिक रूप से समृद्ध होने के कारण तथा राष्ट्रीय उद्योग नीति के बाद इस क्षेत्र की उद्योगिक विकास प्रक्रिया पिछड़ी हुई है। इन विकास प्रक्रियाओं से जनित विकास के स्तरों को जानने के लिए इस प्रकार के अध्ययन का विशेष महत्व है, क्योंकि इसके द्वारा हम क्षेत्र विशेष की विकास स्थिति का सही मूल्यांकन कर सकते हैं तथा विकास से वंचित रहे क्षेत्रो के लिए समुचित आयोजना तैयार करके उनको भी विकास प्रक्रियाओं में सहभागी बना सकते हैं। इस तहसील में स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व एवं पश्चात् हुई विकास दर में बहुत अन्तर देखने में आया है। इसलिए इस शोध का मुख्य आधार स्थानिक एवं सामयिक परिवर्तन को लिया गया है। इस विषय पर भारत के प्रसिद्ध भूगोलवेत्ताओं द्वारा महत्वपूर्ण शोध कार्य किये हैं। जिनमें प्रमुख रूप से डा. आर.सी चान्दना, डा.ए.एन. शर्मा, डा0 वी.के. पुरी, डा. जगदीश सिंह, डा. रामबली सिंह, डा. काशीनाथ सिंह, डा. हीरालाल यादव, डा0 महेश चन्द, डा. एल.एस. भट्ट, डा. एल.के. सेन, डा. जी.एस.गोसाल, डा. आर.पी.मिश्रा, डा. ओ.पीमिश्रा, डा. ए.बी. मुखर्जी प्रमुख हैं इनके शोधपरक कार्यो के आलोक एवं मान्यताओं को आधार मानकर शोध कार्य किया गया है।

ग्रामीण औद्यौगिकरण एवं औद्योगिक विकास

ग्रामीण क्षेत्रों की मुख्य समस्याएं गरीबी, बेरोजगारी आय का असमान वितरण उसकी तीव्रतम विकास अकेले ही इनका निकारण कराने में असमर्थ है। इन समस्याओं के निराकरण के लिए कृषि के अतिरिक्त अन्य आर्थिक क्रियाकलापों का विकास आवश्यक है जो उन ग्रामीण क्षेत्रों की उत्पादकता में वृद्धि के साथ ही रोजगार के अवसरों में वृद्धि कर सके तथा सम्पूर्ण जनसंख्या के लिए उत्पादन के स्थान पर सम्पूर्ण जनसंख्या के द्वारा उत्पादन के सिद्धान्त का अनुपालन करके उत्पादन प्रक्रिया को ही सम्पत्ति के समान वितरण का माध्यम बन सके इस प्रकार उत्पादक का वृहद् परिणाम स्वरूप प्राप्त नहीं की जा सकती है। क्योंकि ऐसे बड़े उद्योग अरबों रूपये के विनियोग के बाद भी मात्र 1 प्रतिशत लोगों की प्रभावी रोजगार प्रदान कर सकें इसके इन उद्योगों ने स्वचालित यन्त्रों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप में बेरोजगारी को प्रोत्साहित किया है। जिससे ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में रूकावट की स्थिति उत्पन्न हो गयी ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वांगीण विकास के लिए बड़े स्तर पर ग्रामीण औद्योगिकीकरण का पूर्ण विचारित एवं प्रभावित कार्यक्रम लागू होना चाहिए। जिसके अन्तर्गत संसाधनों की उपलब्धता तथा स्थानीय मांगों को ध्यान में रखकर मध्यम छोटी परम्परागत घरेलू औद्योगिकरण इकाइयों की योजना बनायी एवं इसका क्रियान्वयन तथा पूर्ण निष्पक्षता की अवधि में किया जाये। में इसलिए ग्रामीण औद्यौगिकरण को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए महत्वपूर्ण अवयव के रूप में स्वीकार किया गया है।

विकेन्द्रीकरण ग्रामीण उद्योगिकरण ग्रामीण क्षेत्रों तथा उनके निवासियों का विकास ही नहीं करता अपितु नगरीय सघनता गंदी बस्तियों में आवश्यक दशाओं में निवास तथा बड़े कारखानों द्वारा की जाने वाली पर्यावरण समस्या का निराकरण भी करता है। ग्रामीण बेरोजगारी को विभिन्न रोजगार के अवसर देकर नगरीय उद्योगों के लिए स्थायी प्रवास को एवं उनकी गति को रोकता है। जापान, चीन, इजराईल आदि देशों में विकेन्द्रीकरण ग्रामीण औद्योगिकरण के सिद्धान्तों पर ग्रामीण उद्योगों का विकास किया गया है। जिसने वहां की ग्रामीण क्षेत्रों की आर्थिक दशा को सुदृढ आधार प्रदान किया है। जापान की ग्रामीण सम्पन्नता का मुख्य कारण यह भी है कि उसके ग्रामीण आँचलों में प्रभावशाली उद्योगों का जाल बिछा हुआ है। इसी प्रकार इजराईल के किसानो में किसानों को कम पूंजी वाले लघु उद्योगों को प्रदान कर ग्रामीण उद्योगों का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया है। ईजराईल का (एगरीडस) विशेष उल्लेखनीय है। जिसके अर्न्तगत अनेक समीपवर्ती गांव ईकाई के रूप में संगठित होकर कृषि उत्पादों का विपन्न, वित्तीय व्यवस्थाएं, यातायात, कारखानों की स्थापना आदि कार्य संयुक्त रूप से करते हैं। वर्तमान परिपेक्ष में ग्रामीण उद्योगिकरण निम्न उद्देश्यों की पूर्ति कर सकता है।

- ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षित एवं अशिक्षित बेरोजगारी के पलायन को रोकने के लिये तथा सीमान्तिक एवं अदृश्य की बेरोजगारी को कम करने के लिए विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त से अधिक से अधिक रोजगार का सृजन।
- उपलब्ध संसाधनों के तर्कसंगत उपयोग के लिए मध्यम एवं कुटीर उद्योग ईकाईयों की उपयुक्त संरचना का निर्माण ।
- लघु एवं घरेलू ईकाईयों को जीवन श्रम स्तर प्रदान करने के लिए उत्पादन सम्भाव्यता एवं वृद्धि।

- समाज के दुर्बल वर्ग ग्रामीण शिल्पकारी एवं कारीगर तथा लघु एवं सीमान्त कृषकों का सृजन एवं आय में वृद्धि।

वृह्द उद्योगों ने राष्ट्रीय पूंजी के अधिकतम अंश का उपयोग करके अप्रत्यक्ष रूप से बेरोजगारी को बढ़ावा दिया है तथा ग्रामीण क्षेत्रों में विकास अवरूद्धता की स्थिति उत्पन्न कर दी है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों का सर्वागीण विकास हेतु वृह्द स्तर पर विकेन्द्रीकृत ग्रामीण औद्योगिकरण का पूर्ण विचारित एवं प्रभावी कार्यक्रम जिसके अर्न्तगत स्थानीय संसाधनों की उपलब्धता तथा स्थानीय मांगों को ध्यान में रखकर छोटी एवं परम्परागत की योजना बनाकर उनका क्रियान्वन पूर्ण क्षमता से न्यूनतम अवधि में किया जा सकें यह एक सामयिक आवश्यकता है। यह पूर्ण नियोजित कार्यक्रम क्षेत्रीय असमानता को दूर करने में तथा विकास प्रक्रिया में ऋतुगामी परिर्वतन का एक प्रभावी माध्यम बन सकता है। अतः ग्रामीण उद्योगों को ग्रामीण विकास कार्यक्रम को एक महत्वपूर्ण अवयव के रूप में स्वीकार किया गया। वर्तमान युग में ग्रामीण विकास की राष्ट्रीय विकास का आधार होगा। विभिन्न राष्ट्रीय विकास योजनाओं में कृषि तथा उद्योगों के मध्य निकट का अर्न्तसम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया गया। 1978 में देश के सभी जनपदों में जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना करके एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया जिसका मुख्य उद्देश्य छोटे उद्यमियों को एक ही केन्द्र पर सभी प्रकार की सहायता तथा सुविधाएं जैसे– लाईसेन्स, वित्त विपणन, ऊर्जा आदि उपलब्ध कराना है। छठी पंचवषीय योजना में जिला उद्योग केन्द्रों के संरचनात्मक ढांचे को ओर अधिक सुदृढ आधार प्रदान किया गया। सप्तम पंचवर्षीय योजना (1985–90) के दस्तावेज में वृहद, मध्यम एवं लघु उद्योगों के त्वरित विकास तथा विभिन्न स्तरों पर अवस्थापनात्मक सुविधाओं के प्रदान किये जाने पर बल दिया गया। आठवी पंचवर्षीय योजना में सरकार ने इस प्रकार के कुटीर और लघु उद्योगों की स्थापना पर बल दिया जिनसे ग्रामों एवं शहरी की पारस्परिक आवश्यकताऐं पूरी हो एवं ग्रामीण क्षेत्रों से महानगरों की ओर होने वाले पलायन को रोका जाये। नौवी पंचवर्षीय योजना (1997–2002) के दृष्टिकोण में योजना के जिन उद्देश्यों को लक्ष्य बनाया गया है उनमें औद्योगिक क्षेत्र में लघु उद्योगों का विकास तथा नियति महत्वपूर्ण है। इस योजनाकाल में देश–विदेश में प्रभावशाली ढंग से प्रतियोगिता कराने के लिए अपेक्षित वित्तीय, क्षमता अर्जित करने के लिए लघु उद्योगों का संघ बनाने पर बल दिया गया है। ग्रामीण आबादी की आर्थिक दशा सुधारने हेतु ग्रामीण उद्योगों की वृद्धि एवं विकास अपरिहार्य कदम है। इसलिए ग्रामीण औद्योगिकरण का औद्योगिक का अंग मानना आवश्यक है। ग्रामीण औद्योगिक खण्ड कृषि को अनेक सेवांए प्रदान करते हैं। जहां भविष्य में अधिक सम्भाव्यता होती है वहां नई औद्योगिक संरचनाए विकसित हो जाती हैं। ग्रामीण उद्योग स्थानीय खपत के अलावा नगरीय उपसंस्थानों हेतु एवं नियति उत्पाद तैयार करते हैं। ग्रामीण औद्योगिकरण से आर्थिक एवं सामाजिक विकास में मदद मिलती है। नगरों एवं ग्रामीण क्षेत्र में अन्तर कम होता है। जन स्थानान्तरण को रोकने में सहायता मिलती है।

औद्योगिकरण एवं आर्थिक विकास : स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय से ही ग्रामीण क्षेत्रों में उद्योगों का विकास औद्योगिक नीति का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है। यद्यपि समय–समय पर अनेक नीतियों में परिवर्तन होता रहा है। लेकिन इन नीतियों के अन्तर्गत परम्परागत ग्रामीण उद्योगो के संरक्षण तथा पुनर्जीवन पर अधिक बल दिया जाता रहा न कि नियोजित ग्रामीण औद्योगिकरण प्रक्रिया की व्यापकता पर। परिणामस्वरूप इन परम्परागत

उद्योगों में लगे हुए लोगों की आय में न तो आपेक्षित वृद्धि हुई और न ही यह प्रक्रिया ग्रामीण क्षेत्रों को वर्तमान देश की वर्तमान औद्योगिकरण प्रक्रिया से समन्वय स्थापित कर सकी।

शोध क्षेत्र एक कृषि प्रधान क्षेत्र है जहां लगभग 80 प्रतिशत आबादी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। वर्तमान में प्रति 10 में से 7 व्यक्ति आजीविका हेतु कृषि पर निर्भर है। 1991 से 2011 के मध्य इस अनुपात मे ं कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन अभिलक्षित नही हुआ है।

तालिका–1

कार्यरत इकाई	**संख्या**	**कार्यरत मजदूर**
पंजीकृत कारखानों की संख्या	16	1667
लघु एवं कुटीर उद्योग की संख्या	112	425
खादी ग्राम ईकाईयां	29	286
ईट भट्टों की संख्या	29	840

स्रोत : जिला उद्योग केन्द्र सहारनपुर

ग्रामीण क्षेत्रो में निवास कर रही जनसंख्या ग्रामीण उद्योग धन्धों में एवं विविध सेवा कार्यो में संलग्न है। ग्रामीण परिवेश में मौजूद घोर आर्थिक विपन्नता का मुख्य कारण ग्रामों को परम्परागत उद्योग धन्धों में गिरावट आना है। जो ग्रामों की लगभग एक चौथाई जनसंख्या की जीवनाधार एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को संतुलित रूप प्रदान करने में सहयोग देते हैं। क्षेत्र के परम्परागत घरेलू धन्धों में बढ़ई, लौहार, चर्म कारीगर आदि के धन्धे मुख्यतः कृषि के साथ जुडे है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् कृषि में आधुनिक तकनीकी के परिवेश से कृषि कार्य करने की विविधा एवं खेती में प्रयुक्त होने वाले उपकरणों में परिवर्तन आया है। कृषि का मशीनीकरण होने से इन धन्धों में पर्याप्त कमी आई है। ट्रैक्टर के प्रयोग से हल का महत्व काफी घटा है व सिंचाई हेतु नलकूपों के विकास से परम्परागत सिंचाई साधनों का प्रयोग अब एक स्वप्न सा हो गया है। तहसील के अन्तर्गत ग्रामीण व्यवसाय में हो रहे निरन्तर बदलाव से परम्परागत घरेलू उद्योग में संलग्न लोगों के सामने अनेक कठिनाइयां उत्पन्न हो गयी है। ये लोग बेहतर रोजगार की तलाश में निरन्तर शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। शहरों में कारीगरों को आसानी से कार्य भी मिल जाता है एवं ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में मजदूरी भी अधिक मिलती है।

ग्रामीण, उद्योग एवं सामाजिक संरचना : तहसील नकुड के अर्न्तगत ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत से दस्तकार विभिन्न घरेलू एवं परम्परागत लघु उद्योग धन्धों में संलग्न है। इनमें बढ़ई, लौहार,जुलाहा, कुम्हार, टोकरी बनाने वाले एवं जूता बनाने वाले (चमडे का उद्योग करने वाले) एवं विशेषीकृत कृषि मजदूर दर्जी एवं दस्तकार प्रमुख हैं। अनुसूचित जाति एवं अनूसुचित जनजाति के शिल्पियों के लिए सरकार द्वारा विशेष प्रोत्साहन दिये जाने के बाद भी ग्रामों में परम्परागत धन्धों को चलाने के सम्बन्ध में कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नही पड़ा है। इस वर्ग में मोची, धानुक, धोबी आते हैं। सरकार द्वारा इनके सामाजिक तथा शैक्षिक विकास के लिए अनेक सुविधाए दी जा रही हैं। ताकि ये प्रशिक्षण प्राप्त करके अपने धरेलू व परम्परागत धन्धें को विकसित कर सके। ग्रामीण

कारीगर कम मूल्य वाले उपलब्ध पदार्थो को अपनी कारीगरी से ऐसी वस्तुओं में बदल देते हैं जो उपयोग होती हैं एवं शहरों में काफी की संख्या में बेची जा सकती है। ये वस्तुऐं हथौडा, छेनी, बढई के औजार एवं लोहे की भट्टी जैसे साधनों के प्रयोग से बनाई जाती है। परन्तु आधुनिक युग की बदलती परिस्थितियों में यह कला एवं कौशल लुप्त होता जा रहा है। फिर भी कुछ क्षेत्रों में नौकरी या व्यवसाय के अभाव में विभिन्न प्रकार के हस्त कौशल पर आधारित घरेलू कुटीर उद्योग किसी न किसी रूप में विद्यमान है तथा उनमें उक्त जातियों का ही वर्चस्व बना है।

वर्तमान ग्रामीण एवं लघु उद्योग : तहसील नकुड में बर्तन बनाने वाले कुम्हार परिवारों की संख्या 572 है जो कि घरेलू दस्तकारों का 12.14 प्रतिशत है। मिट्टी के बर्तन बनाने का कार्य कुम्हार जाति का है। ये ग्रामों में प्रतिदिन प्रयोग में आने वाली वस्तुओं जैसे दूध बिलौने के लिए मथनी, आटा गुथने के लिए तगारी, हाण्डी, तौला, चारा भूसी के लिए नोदों का निर्माण करता है। मिटटी के पात्रों की मांग में गिरावट आई है तब से कुछ कुम्हार ईंट भट्टों पर काम करने लगे है। इसके अलावा जो कुम्हार ग्रामों में अपने धन्धे मे लगे हुए हैं उनकी कार्य शैली में काफी परिवर्तन हुआ है। ऐसे दस्तकारों की संख्या टोडरपुर, बरथाकायस्थ में सबसे अधिक है। बाधी न्याय पंचायत में सबसे कम है।

तालिका–2

तहसील नकुड़ में विभिन्न पारम्परिक एवम् घरेलू तथा लघु उद्योगों कार्यरत जनसंख्या

कार्यों का वितरण	संख्या	प्रतिशत
परिवारिक उद्योग में लगे व्यक्तियों की संख्या	3635	100
कुम्हार	512	12.14
बढ़ईगिरी	840	23.1
सिलाई दर्जी	801	22
जूता निर्माण	480	13.2

स्रोत : व्यक्ति सर्वेक्षण के आधार पर

बढ़ईगिरी : अध्ययन क्षेत्र में बढ़ई परिवारों की संख्या 840 है जो कुल घरेलू दस्तकारों का 23.1 प्रतिशत है। ये हल, जुआ जैसे कृषि उपकरण सिंचाई के लिए चरस के काम में आने वाले चाक, परिवहन, साधनों में बैलगाडी, घोड़ागाड़ी, घर की चौकट, दरवाजे एवं खिडकियां तथा चौकी, बेलन, चारपाई, रूई ओटने की चरखी, फर्नीचर आदि बनाते है एवं उनकी मरम्मत करते हैं। एक कुशल बढई प्रतिदिन औसत 100–150 रू0 कमाता है। यदि उनकों अच्छी सुविधाएं एवं धन मुहैय्या कराया जाय तो उनकी आय में वृद्धि हो सकती है।

सिलाई उद्योग (दर्जी) : अध्ययन क्षेत्र के अर्न्तगत 801 परिवार उद्योग में कार्यरत है जो की कुल घरेलू दस्तकारों का 22 प्रतिशत है। यह दस्तकार दर्जी के नाम से जाने जाते हैं जो थोक बाजारों से कपड़ा खरीदकर स्त्री, पुरूष एवं बच्चों के लिए विभिन्न प्रकार की पौशाक तैयार करते हैं एवं तैयार वस्त्रों को ग्रामों की पैंठ व मुख्य बाजारो में बेचते हैं। ये दस्तकार प्रतिदिन 200 से 250 रूपये कमाते हैं। इन दस्तकारों की

संख्या टोडरपुर, लखनौती, सिकन्दरपुर, बरथाकायस्थ न्याय पंचायत में है तथा सबसे कम बाधी न्याय पंचायत में है।

जूता निर्माण उद्योग : जूता निर्माण उद्योग में 480 परिवार कार्यरत हैं जो क्षेत्र के अन्तर्गत कुल घरेलू दस्तकारों का 13.2 प्रतिशत है। इस व्यवसाय में संलग्न दस्तकार सभी दस्तकरों में सबसे गरीब है जो कि अनूसुचित जाति से सम्बन्धित है। वर्तमान समय में विविध एवं उत्तम प्रकार के जूतों का निर्माण मशीनों द्वारा होता है। जिससे कार्य में अधिक कमी आई है। जब यह व्यवसाय पीढी दर पीढी चलता था तो सम्बन्धित परिवार के युवा वर्ग को रोजगार की तलाश में इधर–उधर भटकने की आवश्यकता नहीं थी। वह घर में रहकर अपने पुश्तैनी निर्माण कौशल को सीख लेते थे। लेकिन इस स्लिप उद्योग में गिरावट आने से तथा कम आय होने से आज युवा इस धन्धे को सीखने में हीनता का अनुभव करने लगे है एवं उन्हे अपने पैतृक व्यवसाय तथा कार्यो से विरक्ति हो गई है। तकनीकी ज्ञान एवं कच्चे माल का अभाव इन दस्तकारों की गरीबी का कारण है। यह दस्तकार प्रतिदिन 100 से 120 रू0 तक ही कमा पाते हैं। यदि दस्तकारों को तकनीकी ज्ञान एवं ऋण की सुविधा उपलब्ध कराई जाए तो उनकी आय में वृद्धि हो सकती है।

बुनकर (लघु स्तरीय वस्तु निर्माण) : इस व्यवसाय के अन्तर्गत 629 परिवार संलग्न है जो कि तहसील नकुड में कुल दस्तकारों का 12.80 प्रतिशत है। सबसे अधिक बुनकर, चिलकाना, सुल्तानपुर न्याय पंचायत में 58 है। जबकि सबसे कम बुनकर न्याय पंचायत बाधी में मात्र 4 हैं। ये बुनकर दरी, खेस एवं जोडी बनाते है। अधिकतर ग्रामों में वस्त्रो की आपूर्ति बुनकरों द्वारा की जाती है। लेकिन अब गांव के लोग शहर जाकर मिलों से तैयार उत्तम प्रकार के कपड़ो की ही खरीदारी करते हैं। इस प्रकार मांग एवं परिवार कम होने से बुनकरों के इस धन्धें में बहुत कमी आई है।

बढ़ईगिरी एवं लुहारगिरी : अध्ययन क्षेत्र में बढ़ई परिवारों की संख्या 730 है जो कुल घेरलु दस्तकारों का 14. 03 प्रतिशत है ये हल, जुआ जैसे कृषि उपकरण सिंचाई के लिए चरस के काम में आने वाले चाक, परिवहन साधनों में बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी, घर की चौखट, दरवाजे एवं खिडकियां तथा चौकी, बेलन, चारपाई, रूई, ओटने की चरखी, फर्नीचर आदि बनाते हैं एवं उनकी मरम्मत करते हैं। एक कुशल बढ़ई प्रतिदिन औसत 100 रू0 कमाता है। यदि उनको अच्छी सुविधाएं एवं धन मुहैय्या कराया जाय तो उनकी आय में वृद्धि हो सकती है।

कृषि उत्पाद एवं अवशेषों पर आधारित उद्योग : ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु कृषि उद्योग सेवा तीनों ही महत्वपूर्ण हैं। जितना अधिक कृषि सेवा का विस्तार होगा उतना ही अधिक उद्योगो एवं सेवा पर निर्भरता बढ़ेगी कृषि के कच्चे माल पर आधारित लघु कुटीर उद्योग अन्य बड़े उद्योगो को आमन्त्रण देते हैं। इस प्रकार कृष्योत्पाद पर एक उद्योग श्रृंखला की स्थापना की जा सकती है। तहसील नकुड का औद्यौगिक विकास मन्द पडा है। इसके अनेक अलग–अलग कारक है। जो औद्योगिक विकास को प्रभावित करेंगे प्रमुख कारकों में कच्चे माल की सहज आपूर्ति एवं उपलब्धता जिसमें प्रमुखता से कृषिगत क्षेत्र होने के कारण कृष्योत्पादन पर आधारित अनेक उद्योगो की स्थापना की सम्भाव्यता प्रदान करता है। यदि आधारभूत सुविधाओं को विकसित किया जाये तो नकुड तहसील क्षेत्र का औद्योगिक विकास तीव्रगामी हो सकता है। कृषक अब एक कृषक न होकर कृषि से जुडे लघु व कुटीर उद्योगो को चलाता है। कृषि सहायक एवं कृषि पर आधारित उद्योग जिनमें धान, दाले, अनाज पीसना, तिलहन से तेल निकालना, गुड़ एवं शक्कर उद्योग, फलोत्पादन एवं फल प्रसंस्करण

जिसमें मुरब्बे, चटनी, अचार बनाना एवं फलों की सुरक्षा एवं संरक्षण भी शामिल है। इसके अतिरिक्त दुग्ध उत्पादन, गाय भैंस, मुर्गी, मधुमक्खी पालन, आदि प्रमुख उद्योग हैं। उत्तर प्रदेश कृषि विविधकरण योजना के अन्तर्गत कुछ अन्य कुटीर उद्योगों को भी इस क्षेत्र में स्थापित किया जा सकता है। जिसमें पेपर प्लेट, पत्तल, पेपर, दोना, आर्गेनिक फार्मिंग, औषध पौधे उत्पादन उत्तम बीज पैदा करना प्रमुख है। वस्त्र उद्योग में खादी, ऊनी, सूती वस्त्र निर्माण, लकड़ी उद्योग, चर्म उद्योग, मछली पालन भी अपना प्रमुख स्थान रखते हैं। वर्तमान में आधुनिक विकसित तकनीक, मशीनों का उपयोग कर कुटीर एवं लघु कृषि पर आधारित उद्योगों की स्थापना कर परम्परागत एवं पाश्चात्य बाजार की मांग के अनुसार नये उत्पाद विकसित किये गये वास्तव में कुटीर उद्योग ग्रामीण रोजगार क्षेत्र में एक जीवनदायी कार्य कर रहे हैं। केन्द्र एवं राज्य सरकार ग्राम्य विकास योजनाओं के रूप में तहसील स्तर पर संचालित कर कृषि उत्पाद एवं ग्रामीण क्षेत्रों से जुडे विभिन्न कुटीर उद्योग स्वरोजगार आदि के माध्यम से इन लघु तथा अति लघु इकाईयों का सृजन एवं संचालन किया जाता है। इन उत्पादन ईकाईयों के लिये निरन्तर अनुदान तकनीकी परिक्षण हेतु विशेष प्रशिक्षणकृत विकास मार्गदर्शन भी विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाए प्रदान करती है। स्वदेशी आन्दोलन के कारण तथा सरकारी सहायता के कारण कुटीर उद्योग को वर्तमान में बहुत प्रोत्साहन मिला है। इन उद्योगों के संगठन के रूप में न आने के कारण स्थिति अधिक सुदृढ़ नही है। क्षेत्रीय कुटीर उद्योगो को आज भी अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। हथकरघा एवं ग्रामीण वस्त्र उद्योग में औद्योगिक विकास की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र स्वतन्त्रता से पूर्व से काफी पिछड़ा हुआ था। स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परम्परागत कुटीर उद्योग ही उन्नत अवस्था में कार्यरत थे। किन्तु भारत में विदेशी शासन की उपेक्षापूर्ण नीति तथा विदेशी उद्योगों की प्रतियोगिता के कारण अधिकांशतः कुटीर उद्योग पिछड़ गये।

चमड़ा उद्योग : शोध क्षेत्र में पशुओ की अधिकता से चमडा शोधन कार्य होता रहा। गंगोह में बडी पशुवध शाला है क्षेत्र में छोटी छोटी वधशालाएं अनेक हैं। 19वीं शताब्दी में यहां से चमडा खुर, सींग आदि कानपुर तथा आगरा आदि में भेजे जाते थे। आज भी चमडा शोधन की एक भी उन्नत इकाई क्षेत्र में नही है। 36 प्रतिशत मुसलमान आबादी के होने से क्षेत्र में लगातार भैंसों, गाय व बकरा के मीट का प्रचलन है। उनकी खाल विक्रय कर दी जाती हैं। चमडा शोधन इकाई भी क्षेत्र में अच्छी तरह पनप सकती हैं।

वस्त्र उद्योग : क्षेत्र के हाथ के निर्माण का कपडा निर्माण उद्योग बिल्कुल ठप्प है। प्राचीन काल में लोग हाथ के बुने कपडे को पहनते थे जिनमे ंमोटी खादी की धोती ओर दोहर इस्तेमाल करते थे । यहां पर गर्म कम्बल निर्माण व ऊनी वस्त्रों का निर्माण भी होता था। क्षेत्र में वस्त्र कुटीर उद्योग की आवश्यकता है।

वनोत्पाद : क्षेत्र में शीशम, तुन, नीम, यूकेलिप्टस व पोपलर आदि वृक्ष उगाये जाते हैं। पोपलर एक प्रणपाती वन है। क्षेत्र में अधिकता से उगाया जाता है। जिसके आधार पर यहां का कोई लकडी का उद्योग नही है मात्र वनोंत्पाद से शीशम, तुन, नीम की लकडी का प्रयोग फर्नीचर बनाने के काम आता है। क्षेत्र में पोपलर की पैदावार प्रति वर्ष 25 से 30 लाख कुन्तल प्रति वर्ष है। पोपलर व यूकेलिप्टस का क्षेत्र मे ंकोई उपभोग नही है। क्षेत्र से बाहर हरियाणा राज्य के यमुनानगर के लिए भेज दिया जाता है। यह एक व्यापारिक फसल के रूप मे उगाया जाता है।

दूध उद्योग : शोध क्षेत्र में दूध उद्योग की इकाई एक भी नही है। 5 लाख लीटर दूध प्रतिदिन क्षेत्र में उत्पादित होता है जिसका 50 प्रतिशत दूध उपभोग के बाद नानौता व सहारनपुर स्थित दूध प्लाण्ट को भेज दिया जाता है। क्षेत्र में दूध उद्योग हेतु आदर्श दशाएं हैं।

निष्कर्ष–

तहसील नकुड़ लघु व कुटीर उद्योगों में अपना प्रमुख स्थान रखता है फिर भी यहां अनेक लघु व कुटीर उद्योग के लिए आदर्श स्थिति रखता है। सड़क की सम्पूर्णता, कच्चे माल की उत्पादकता उस बात का प्रमाण है। इस क्षेत्र में लघु व कुटीर उद्योगो को बढावा मिलना चाहिए। सरकारी नीतियों में लचीलापन लाकर सरकारी सहभागिता को बढ़ाया जाना चाहिए जिन उद्योगों का पदानुक्रम नही हुआ है। उनकी विकास की क्षेत्र आदर्श दशाएं रखता है। उन उद्योगों की स्थापना की जानी चाहिये। यदि उपरोक्त आयोजनों को ध्यान में रखकर उद्योग विकास प्रक्रिया को बढ़ाया जाये तो नकुड़ तहसील क्षेत्र अपनी पहचान आदर्श क्षेत्रों में करा पायेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- समाजार्थिक समीक्षा (2007) : कार्यालय जिला अर्थ एवं सांख्याधिकारी अर्थ एवं संख्या प्रभाग, राज्य नियोजन संस्थान, मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश।
- समाजार्थिक समीक्षा (2017), कार्यालय जिला अर्थ एवं सांख्याधिकारी अर्थ एवं संख्या प्रथम, राज्य नियोजन संस्थान, मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश।
- सुधीर कुमार सिंह (2014) : ''गाँवों के सम्पूर्ण विकास के लिए सांसद आदर्श ग्राम योजना'' रोजगार समाचार, नई दिल्ली, अंक 29 नवम्बर, पृ. 1
- सुब्रमणियम, बी.पी. (1958) : दी क्लाइमेट ऑफ इण्डिया इन रिलेशन टू दी डिस्ट्रिव्यूशन ऑफ नेचुरल वेजिटेशन, दी इण्डिया ज्योग्राफर, अंक 3, पृ. 1.
- सेन, एल.के. (1971) : प्लानिंग रूरल ग्रोथ सेन्टर्स फार इण्टिग्रेटेड रूरल डेवलपमेंट– ए स्टडी इन मारियागुडा तालुका, एन.आई.सी.डी., हैदराबाद, पृ. 20.
- दाण्डेकर, एच. एव अन्य (2018), रोल ऑफ रूरल इण्डस्ट्रीज इन रूरल डेवलपमेंट, इन मिश्रा, आर.पी. इत्यादि (सम्पा.), रूरल एरिया डेवलपमेंट पर्सपेक्टिव एण्ड एप्रोचेज, स्टार्लिंग पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
- देसाई, आई.पी. एवं चौधरी, सी.एम. (2017) : हिस्ट्री ऑफ रूरल डेवलपमेंट इन माडर्न इण्डिया, दिल्ली, अंक 2, पृ. 183–189.
- दूबे, बेचन एवं सिंह, मंगला (1984), 'समन्वित ग्रामीण विकास', प्रथम संस्करण, पृ. 156.
- दूबे, के.के. एवं सिंह एम.बी. (2018) ''जनसंख्या भूगोल' रावत पब्लिकेशन, जयपुर, एवं नई दिल्ली, पृ. 80, 196–97.
- वर्मा, जे.सी. (1979) : ग्रामीण विकास के निर्धारक तत्व, खादी ग्रामोद्योग अंक 10, जुलाई पृ. 450.